

[2024] 1 एस.सी.आर. 677: 2024 आईएनएससी 58

केंद्रीय जांच ब्यूरो

बनाम

कपिल वधावन व अन्य

(आपराधिक अपील सं. 391/2024)

24 जनवरी 2024

[माननीय न्या. सुश्री बेला एम. त्रिवेदी* और माननीय न्या. श्री

पंकज मिथल]

विचाराधीन मुद्दा

क्या प्रत्यर्थागण धारा 167(2) के परंतुक के तहत प्रदत्त कानूनी अधिकार का लाभ पाने के हकदार थे, इस आधार पर कि प्राथमिकी में नामित कुछ अभियुक्तगण के खिलाफ जांच लंबित थी, हालांकि प्रत्यर्थागण के सहित अन्य अभियुक्तगण के खिलाफ धारा 173(2) के तहत रिपोर्ट निर्धारित समय सीमा के भीतर दायर की गई थी और धारा 167(2) के तहत वैधानिक जमानत मांगने वाले प्रत्यर्थागण के आवेदन पर विचार करने से पहले विशेष न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान लिया गया था।

हेडनोट्स

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 167(2), धारा 173 का परंतुक, - धारा 167(2) के परंतुक के तहत प्रदत्त कानूनी अधिकार - लाभ - जब हकदार हों - भा.दं.सं. की धारा 120-ख की सहपठित धारा 409, 420 और 477क, और पीसी एक्ट, 1988 की धारा 13(2) की सहपठित धारा 13(1)(घ), के तहत दंडनीय अपराधों हेतु प्राथमिकी दर्ज की गई

थी - भा.दं.सं. की धारा 120ख की सहपठित धारा 206, 409, 411, 420, 424, 465, 468 और 477क, और पीसी एक्ट की धारा 13(2) की सहपठित धारा 13(1)(घ), के तहत अपराधों हेतु आरोप पत्र प्रत्यर्थीगण-अभियुक्त सहित 75 व्यक्तियों/संस्थाओं के खिलाफ दायर किया गया था - विशेष न्यायालय ने सभी अभियुक्तगण के खिलाफ कथित अपराधों का संज्ञान लिया और वारंट/समन जारी किए - इसके बाद, विशेष न्यायालय ने यह मानते हुए कि जांच अधूरी थी और आरोपपत्र टुकड़ों में दाखिल किया गया था, प्रत्यर्थीगण को धारा 167(2) के तहत वैधानिक जमानत दी गई - उच्च न्यायालय द्वारा आदेश बरकरार रखा गया:

अभिनिर्धारित किया गया: धारा 173(2) के तहत रिपोर्ट/आरोपपत्र की कानूनी आवश्यकता का अनुपालन तभी होगा जब उसमें निर्धारित विभिन्न विवरण शामिल किए गए हों - यदि धारा 175(5) के अनुसार सभी दस्तावेज और साक्षियों के बयान इसके साथ हों तो यह पूर्ण है और यह आवश्यक नहीं है कि अपराध का पूरा विवरण अवश्य दिया जाए - धारा 167 की उपधारा (2) में संलग्न प्रावधान का लाभ अपराधी को तभी मिलेगा जब आरोप पत्र दाखिल न किया गया हो तथा उसके विरुद्ध जांच लंबित रखी गई हो - हालांकि, एक बार आरोप-पत्र दाखिल हो जाने के बाद, उक्त अधिकार समाप्त हो जाता है - इस प्रकार, एक बार आरोप पत्र के साथ प्रस्तुत सामग्री से, न्यायालय अपराध के बारे में संतुष्ट हो जाता है और अभियुक्त द्वारा कथित रूप से किए गए अपराध का संज्ञान ले लेता है, तो यह बात मायने नहीं रखती कि धारा 173(8) के अनुसार आगे की जांच लंबित है या नहीं - अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध आगे की जांच लंबित रहने अथवा आरोप पत्र दाखिल करने के समय उपलब्ध न होने वाले कुछ दस्तावेजों को प्रस्तुत करने से न तो आरोप पत्र निरस्त होगा, न ही यह अभियुक्त को इस आधार पर वैधानिक जमानत प्राप्त करने

का अधिकार देगा कि आरोप पत्र अधूरा था अथवा आरोप पत्र धारा 173(2) के अनुसार दाखिल नहीं किया गया था - वर्तमान मामले में, प्रत्यर्पण के विरुद्ध निर्धारित समय सीमा के भीतर आरोप पत्र दाखिल कर दिया गया है तथा उनके द्वारा कथित रूप से किए गए अपराधों का विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान ले लिया गया है, प्रत्यर्पण इस आधार पर धारा 167(2) के अंतर्गत वैधानिक जमानत के कानूनी अधिकार का दावा नहीं कर सकते थे कि अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध जांच लंबित थी - विशेष न्यायालय सहित उच्च न्यायालय ने भी गंभीर कानूनी त्रुटि की है - आक्षेपित आदेश खारिज किए जाते हैं। [अनुच्छेद 22, 23 और 25]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 167(2) - वैधानिक जमानत का अधिकार - भारत का संविधान - अनुच्छेद 21:

अभिनिर्धारित किया गया: डिफॉल्ट जमानत का अधिकार न केवल एक कानूनी अधिकार है, बल्कि यह अनुच्छेद 21 से प्राप्त एक अधिकार है - यह एक अपरिहार्य अधिकार है, हालांकि, यह चालान या आरोप पत्र दाखिल करने से पहले ही लागू किया जा सकता है, और चालान दाखिल होने पर लागू नहीं रहता है, यदि इसका पहले से ही लाभ नहीं उठाया गया है - एक बार चालान दाखिल हो जाने के बाद, जमानत देने के प्रश्न पर विचार किया जाना चाहिए और चालान दाखिल होने के बाद अभियुक्त को जमानत देने से संबंधित प्रावधानों के तहत मामले की योग्यता के संदर्भ में ही निर्णय लिया जाना चाहिए। [पैरा 15]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 173 - रिपोर्ट/आरोप पत्र के अंतर्गत:

अभिनिर्धारित किया गया: क्या न्यायालय को यह सूचना दी जाती है कि संज्ञेय अपराध की जांच करने पर, जांच अधिकारी न्यायालय के लिए अपराध की जांच करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्राप्त करने में

सक्षम हो गया है तथा आवश्यक जानकारी न्यायालय को भेजी जा रही है - हालांकि सामान्यतः अभियोजन पक्षकार द्वारा भरोसा किए गए सभी दस्तावेजों को आरोप पत्र के साथ प्रस्तुत किया जाना चाहिए, फिर भी कुछ कारणों से, यदि सभी दस्तावेज आरोप पत्र के साथ दाखिल नहीं किए जाते हैं, तो यह अपने आप में आरोप पत्र को अमान्य या दोषपूर्ण नहीं बनाता है। [अनुच्छेद 22, 23]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धाराएं 173(2), (8):

अभिनिर्धारित किया गया: धारा 173(8) के तहत आगे की जांच के लिए प्रार्थना करने का जांच अधिकारी का अधिकार केवल इसलिए नहीं छीना जाता है क्योंकि अभियुक्त के खिलाफ उप-धारा (2) के तहत आरोप पत्र दायर किया गया है। [पैरा 23]

उद्धृत निर्णयज विधि

संजय दत्त बनाम सीबीआई, बॉम्बे के माध्यम से राज्य (II)
[\[1994\] 3 पूरक एससीआर 263](#): (1994) 5 एससीसी 410;
के. वीरास्वामी बनाम भारत संघ व अन्य [\[1991\] 3 एससीआर 189](#): (1991) 3 एससीसी 655 - का अनुपालन किया गया।

दिनेश डालमिया बनाम सीबीआई [\[2007\] 9 एससीआर 1124](#): (2007) 8 एससीसी 770; *सुरेश कुमार भीकमचंद जैन बनाम महाराष्ट्र राज्य व अन्य* [\[2013\] 1 एससीआर 1037](#) : (2013) 3 एससीसी 77; *गंभीर धोखाधड़ी जांच कार्यालय बनाम राहुल मोदी व अन्य* [\[2022\] 1 एससीआर 597](#): 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 153 - पर निर्भरता रखी गयी।

एम. रवींद्रन बनाम खुफिया अधिकारी, राजस्व खुफिया निदेशालय [\[2020\] 12 एससीआर 915](#): (2021) 2 एससीसी 485; *राकेश कुमार पॉल बनाम असम राज्य* [\[2017\] 8](#)

एससीआर 785: (2017) 15 एससीसी 67- संदर्भित किया गया।

अधिनियमों की सूची

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973; दंड संहिता, 1860; भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988; भारत का संविधान।

मुख्य शब्दों की सूची

वैधानिक जमानत का अधिकार; रिपोर्ट/आरोप पत्र की कानूनी आवश्यकता; अतिरिक्त जांच; अन्य अभियुक्तगण के संबंध में आगे की जांच लंबित; अपूर्ण आरोप पत्र; अतिरिक्त जांच हेतु प्रार्थना करने का जांच अधिकारी का अधिकार; विशेष न्यायालय।

निम्नलिखित से उत्पन्न मामला

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील सं. 391/2024।
आ.वि.वा. सं. 6544/2022 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के दिनांक 30.05.2023 के निर्णय एवं आदेश से।

पक्षकारगण के प्रस्तुतकर्ता

एस.वी. राजू, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, मुकेश कुमार मरोरिया, जोहेब हुसैन, अन्नम वेंकटेश, अक्षय नैन, अपीलार्थी हेतु अधिवक्तागण।
मुकुल रोहतगी, अमित देसाई, वरिष्ठ अधिवक्तागण, महेश अग्रवाल, अंकुर सैगल, रोहन दक्षिणी, सुश्री पूजा कोठारी, श्री कामाक्षी सहगल, श्री काजल दलाल, अर्चित जैन, राजेश कुमार, ई. सी. अग्रवाला, प्रत्यर्थीगण हेतु अधिवक्तागण।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

निर्णय

न्या. बेला एम. त्रिवेदी

1. अनुमति प्रदान की गई।।
2. अपीलार्थी-सीबीआई ने आप.वि.वा. सं. 6544/2022 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा पारित दिनांक 30.05.2023 के आक्षेपित आदेश को चुनौती देने की मांग की है, जिसमें विशेष न्यायाधीश (पीसी अधिनियम), सीबीआई-08, नई दिल्ली (जिसे आगे विशेष न्यायालय कहा जाएगा) द्वारा पारित दिनांक 03.12.2022 के आदेश को बरकरार रखा गया है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 को दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत वैधानिक जमानत दी गई है।
3. वर्तमान अपील को उत्पन्न करने वाले संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, नरीमन पॉइंट, मुंबई के डीजीएम श्री विपिन कुमार शुक्ला द्वारा दर्ज कराई गई शिकायत के आधार पर दिनांक 20.06.2022 को सीबीआई, एसी-VI/एसआईटी, नई दिल्ली में प्राथमिकी सं. आरसी2242022A0001 दर्ज की गई, जिसमें भा.दं.सं. की धारा 120-ख की सहपठित धारा 409, 420 और 477क और पीसी अधिनियम, 1988 (जिसे आगे पीसी अधिनियम कहा जाएगा) की धारा 13(2) की सहपठित धारा 13(1)(घ) के तहत दंडनीय अपराधों के लिए दीवान हाउसिंग फाइनेंस कॉर्पोरेशन लिमिटेड (डीएचएफएल) और 12 अन्य अभियुक्त व्यक्तियों/कंपनियों के खिलाफ मामला दर्ज किया गया। उक्त प्राथमिकी में अन्य बातों सहित यह आरोप लगाया गया था कि डीएचएफएल, श्री कपिल वधावन, तत्कालीन अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, डीएचएफएल ने 12 अन्य अभियुक्तगण के साथ मिलकर यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के नेतृत्व वाले 17 बैंकों के संघ को धोखा देने के लिए एक

आपराधिक साजिश रची, और उक्त आपराधिक साजिश के अनुसरण में, उक्त अभियुक्त व्यक्तियों/संस्थाओं ने संघ के बैंकों को लगभग 42,000 करोड़ रुपए के भारी ऋण स्वीकृत करने के लिए प्रेरित किया और उसके बाद उन्होंने डीएचएफएल की लेखा बहियों में हेराफेरी करके उक्त निधियों के एक महत्वपूर्ण हिस्सा निकाल लिया व गबन किया और जानबूझकर और बेईमानी से उक्त संघ के बैंकों के वैध बकाये का भुगतान नहीं किया, और इस तरह जनवरी, 2010 से दिसंबर, 2019 की अवधि के दौरान संघ के ऋणदाताओं को 34,000 करोड़ रुपए का गलत नुकसान पहुंचाया।

4. प्रत्यर्थी सं. 1- कपिल वधावन और प्रत्यर्थी सं. 2- धीरज वधावन को अपीलार्थी-सीबीआई द्वारा उक्त प्राथमिकी के संबंध में 19.07.2022 को गिरफ्तार किया गया और 30.07.2022 को न्यायिक अभिरक्षा में भेज दिया गया।
5. जांच करने के बाद, सीबीआई द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 सहित 75 व्यक्तियों/संस्थाओं के खिलाफ भा.दं.सं. की धारा 120ख की सहपठित धारा 206, 409, 411, 420, 424, 465, 468 और 477क तथा पीसी अधिनियम की धारा 13(2) सहपठित 13(1)(घ) के तहत अपराधों के लिए दिनांक 15.10.2022 को आरोप पत्र दायर किया गया।
6. प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 ने 29.10.2022 को विशेष न्यायालय के समक्ष दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें इस आधार पर कानूनी जमानत मांगी गई कि सीबीआई द्वारा दायर आरोपपत्र अधूरा था और दं.प्र.सं. की धारा 173(2) के तहत परिभाषित कोई अंतिम रिपोर्ट दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत प्रदान की गई कानूनी अवधि के भीतर दायर नहीं की गई थी, या वैकल्पिक रूप से न्यायालय के क्षेत्राधिकार की कमी को देखते हुए न्यायिक अभिरक्षा से

उनकी रिहाई की मांग की गई क्योंकि 2018 में संशोधित पीसी अधिनियम की धारा 17क के तहत कोई अनुमोदन नहीं था।

7. विशेष न्यायालय ने दिनांक 26.11.2022 के आदेश के तहत अभिनिर्धारित किया कि विशेष न्यायालय के पास मामले से निपटने का क्षेत्राधिकार है और पीसी अधिनियम की धारा 17क के तहत प्रतिबंध मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता। दिनांक 26.11.2022 के एक अलग आदेश द्वारा, विशेष न्यायालय ने सभी 75 अभियुक्तगण के खिलाफ कथित अपराधों का संज्ञान लिया और वर्तमान प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (अ-1 और अ-2) के साथ-साथ अभियुक्त सं. 7 के खिलाफ भी पेशी वारंट जारी किए। विशेष न्यायालय ने अन्य अभियुक्तगण के खिलाफ भी वारंट/समन जारी किए।
8. तत्पश्चात, विशेष न्यायालय ने दिनांक 03.12.2022 के आदेश के तहत यह माना कि जांच अधूरी थी और आरोप पत्र टुकड़ों में दायर किया गया था, आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (अ-1 और अ-2) दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत कानूनी जमानत के हकदार थे।
9. अपीलार्थी-सीबीआई ने विशेष न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 03.12.2022 के उक्त आदेश से व्यथित होकर दं.प्र.सं. की धारा 482 की सहपठित धारा 439(2) के अंतर्गत उच्च न्यायालय के समक्ष आ.वि.वा. सं. 6544/2022 के तहत एक याचिका दायर की। उच्च न्यायालय ने दिनांक 30.05.2023 के आक्षेपित आदेश के तहत उक्त याचिका को खारिज कर दिया और विशेष न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 03.12.2022 के आदेश को बरकरार रखा।

प्रस्तुतियाँ:

10. अपीलार्थी की ओर से विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री एस.वी. राजू ने जोरदार तरीके से दलील दी कि अपीलार्थी-सीबीआई द्वारा वर्तमान प्रत्यर्थागण सहित 75 अभियुक्तगण के खिलाफ जांच पूरी होने पर आरोपपत्र दाखिल किया गया था, जिसमें कहा गया था कि कुछ अन्य अभियुक्तगण के खिलाफ आगे की जांच लंबित है, जिसका मतलब यह नहीं है कि प्रत्यर्थागण के खिलाफ अधूरा आरोपपत्र दाखिल किया गया था। विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने दलील दी कि सीबीआई द्वारा दं.प्र.सं. की धारा 173 के तहत दाखिल रिपोर्ट पूरी थी, जिसमें विधि के अनुसार सभी विवरण शामिल थे। इस मामले में, विशेष न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थागण के विरुद्ध कथित अपराधों का संज्ञान लेने के पश्चात, दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के अन्तर्गत कानूनी जमानत विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान की गई है, जो कि संहिता की कानूनी योजना के विरुद्ध है। उनके अनुसार, केवल तभी जब आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया जाता है और जांच लंबित रखी जाती है, तो संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) में संलग्न परंतुक का लाभ अपराधी को उपलब्ध होगा, हालांकि एक बार आरोप-पत्र दाखिल हो जाने के बाद, अभियुक्त का उक्त अधिकार समाप्त हो जाता है, और ऐसा अधिकार केवल इसलिए पुनः लागू नहीं होता है क्योंकि संहिता की धारा 173(8) के अर्थ में आगे की जांच लंबित रहती है। अपने तर्कों को पुष्ट करने के लिए श्री एस.वी. राजू ने दिनेश डालमिया बनाम सी.बी.आई. के मामले में दिए गए निर्णय पर बहुत अधिक भरोसा किया है। उन्होंने एम. रवींद्रन बनाम खुफिया अधिकारी, राजस्व खुफिया निदेशालय के निर्णय का भी उद्धरण देते हुए कहा कि जब अभियुक्त को डिफॉल्ट जमानत का अधिकार प्राप्त हो जाता है, तो वह डिफॉल्ट जमानत हेतु आवेदन करने में विफल रहता है और बाद में यदि मजिस्ट्रेट के समक्ष आरोपपत्र, अतिरिक्त शिकायत या समय

विस्तार की मांग करने वाली रिपोर्ट पेश की जाती है, तो डिफॉल्ट जमानत का अधिकार समाप्त हो जाएगा।

11. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी सं. 1 के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी ने प्रस्तुत किया कि संज्ञान के मुद्दे का वैधानिक जमानत से कोई लेना-देना नहीं है, चूंकि धारा 167(2) के तहत अधिकार एक कानूनी अधिकार है, इसलिए आरोप पत्र निर्धारित समय सीमा के भीतर दाखिल नहीं किया गया है और यदि दाखिल भी किया गया है, तो पूर्ण आरोप पत्र दाखिल नहीं किया गया है। उनके अनुसार, विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंची हैं कि सीबीआई द्वारा दायर किया गया आरोपपत्र अधूरा था, जिससे प्रत्यर्थीगण को दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत डिफॉल्ट बेल का लाभ पाने का कानूनी अधिकार प्राप्त हुआ। श्री मुकुल रोहतगी ने सुरेश कुमार भीकमचंद जैन बनाम महाराष्ट्र राज्य व अन्य के मामले में दिए गए निर्णय का उद्धरण देते हुए अपने तर्क को पुष्ट किया है कि दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत डिफॉल्ट जमानत के उद्देश्य से जांच पूरी हुई है या नहीं, यह निर्धारित करने के लिए संज्ञान प्रासंगिक आधार नहीं है। राकेश कुमार पॉल बनाम असम राज्य के मामले में दिए गए निर्णय पर भी भरोसा किया गया है, जिसमें कहा गया है कि यदि आरोपपत्र दाखिल नहीं किया गया है और वैधानिक जमानत का अधिकार अपरिवर्तनीय स्थिति में पहुंच गया है, तो अभियोजन पक्षकार द्वारा किसी भी बहाने से इसे विफल नहीं किया जा सकता है। श्री रोहतगी ने विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री एस.वी. राजू द्वारा भरोसा किए गए डालमिया के मामले (पूर्वोक्त) को अलग करने की मांग करते हुए कहा कि उक्त मामले में, अभियुक्त फरार था और आरोप पत्र पहले ही दायर किया जा चुका था, जबकि तत्काल मामले में, दायर आरोप पत्र अधूरा माना गया है। उनके अनुसार, दो न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए

समवर्ती निष्कर्षों में, जब तक कि विपरीत न हो, हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, भले ही कानून की कोई त्रुटि हो। उन्होंने आगे कहा कि एक बार जमानत मंजूर हो जाने के बाद और उच्च न्यायालय द्वारा पारित ऐसे आदेश के क्रियान्वयन पर रोक लगाने वाला अंतरिम आदेश सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित नहीं किया जाता है, तो कार्यवाही जमानत रद्द करने के समान हो जाती है, जिसके लिए मानदंड बिल्कुल अलग हैं।

12. प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अमित देसाई ने प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी द्वारा दिए गए तर्कों को अपनाया, तथा आगे प्रस्तुत किया कि आरोप पत्र दाखिल करना प्रत्यर्थीगण को दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत दिए गए अपरिहार्य अधिकार को हराने हेतु एक छल या चाल थी।

विश्लेषण:

13. इस अपील में, हमारे विचारणीय मुख्य प्रश्न यह है कि क्या प्रत्यर्थी दं.प्र.सं. की धारा 167 की उपधारा 2 के परंतुक के तहत प्रदत्त कानूनी अधिकार का लाभ पाने के हकदार थे, इस आधार पर कि प्राथमिकी में नामित कुछ अभियुक्तगण के खिलाफ जांच लंबित थी, हालांकि प्रत्यर्थीगण के खिलाफ धारा 173 की उपधारा (2) के तहत रिपोर्ट (आरोप पत्र) अन्य अभियुक्तगण के साथ निर्धारित समय सीमा के भीतर दायर की गई थी और हालांकि दं.प्र.सं. की धारा 167 (2) के तहत वैधानिक जमानत की मांग करने वाले प्रत्यर्थीगण के आवेदन पर विचार करने से पहले विशेष न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान लिया गया था?

14. पक्षकारगण के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत किए गए तर्कों को बेहतर ढंग से समझने के लिए धारा 167 और धारा 173 के सुसंगत भागों को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जाता है: -

“167. जब जांच चौबीस घंटे में पूरी नहीं की जा सकती तो प्रक्रिया। -

1.

2. वह मजिस्ट्रेट जिसके पास इस धारा के अधीन अभियुक्त व्यक्ति भेजा जाता है, चाहे उसे मामले की सुनवाई करने का अधिकार हो या न हो, समय-समय पर अभियुक्त को ऐसी अभिरक्षा में, जिसे वह मजिस्ट्रेट ठीक समझे, कुल मिलाकर पन्द्रह दिन से अधिक अवधि के लिए निरुद्ध करने को प्राधिकृत कर सकता है; और यदि उसे मामले की सुनवाई करने या उसे विचारण हेतु सुपुर्द करने का अधिकार नहीं है, और वह आगे निरुद्ध करना अनावश्यक समझता है, तो वह अभियुक्त को ऐसे क्षेत्राधिकार वाले मजिस्ट्रेट के पास भेजने का आदेश दे सकता है:

बशर्ते कि-

[(क) मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति को पुलिस की अभिरक्षा के अलावा पंद्रह दिन की अवधि से अधिक अभिरक्षा में रखने का अधिकार दे सकता है, यदि वह संतुष्ट है कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं, लेकिन कोई भी मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति को इस अनुच्छेद के तहत अभिरक्षा में रखने को अधिकृत नहीं करेगा, जो कि कुल अवधि से अधिक हो-

(i) नब्बे दिन, जहां जांच मृत्युदंड, आजीवन कारावास या कम से कम दस वर्ष की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध से संबंधित है;

(ii) साठ दिन, जहां जांच किसी अन्य अपराध से संबंधित है, और, नब्बे दिन या साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति पर, जैसा भी मामला हो, अभियुक्त व्यक्ति को जमानत पर रिहा कर दिया जाएगा यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और देता है, और इस उपधारा के तहत जमानत पर रिहा किए गए प्रत्येक व्यक्ति को उस अध्याय के प्रयोजनों के लिए अध्याय XXXIII के प्रावधानों के तहत रिहा किया गया माना जाएगा;]

(ख).....

(ग)

173. जांच पूरी होने पर पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट। -

(1) इस अध्याय के तहत प्रत्येक जांच अनावश्यक देरी के बिना पूरी की जाएगी।

[(1क) 3 [धारा 376, 376क, 376कख, 376ख, 376ग, 376घ, 376घक, 376घख या 376ड के तहत अपराध] के संबंध में जांच उस तारीख से शुरू होगी, जिस दिन पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी द्वारा सूचना दर्ज की गई थी।]

(2) (i) जैसे ही यह पूरा हो जाता है, पुलिस थाने का प्रभारी अधिकारी पुलिस रिपोर्ट पर अपराध का संज्ञान लेने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट को राज्य सरकार द्वारा निर्धारित प्रारूप में एक रिपोर्ट भेजेगा, जिसमें यह बताया जाएगा कि-

- (क) पक्षकारगण के नाम;
- (ख) सूचना की प्रकृति;
- (ग) उन व्यक्तियों के नाम जो मामले की परिस्थितियों से परिचित प्रतीत होते हैं;
- (घ) क्या कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है और यदि हां, तो किसके द्वारा;
- (ङ) क्या अभियुक्त को गिरफ्तार किया गया है;
- (च) क्या उसे उसके मुचलके पर रिहा किया गया है और यदि हां, तो प्रतिभूतियों सहित या उनके बिना;
- (छ) क्या उसे धारा 170 के तहत अभिरक्षा में भेजा गया है।

[(ज) क्या महिला की चिकित्सा जांच की रिपोर्ट संलग्न की गई है, जहां जांच 2 [धारा 376, 376क, 376कख, 376ख, 376ग, 376घ, 376घक, 376घख] या भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 376ड] के तहत अपराध से संबंधित है।]

(ii) अधिकारी, राज्य सरकार द्वारा निर्धारित तरीके से, अपने द्वारा की गई कार्रवाई की जानकारी उस व्यक्ति को भी देगा, यदि कोई हो, जिसके द्वारा अपराध के किए जाने से संबंधित सूचना सबसे पहले दी गई थी।

(3).....

(4).....”

15. इस सुस्थापित कानूनी स्थिति से कोई असहमति नहीं हो सकती कि दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत वैधानिक जमानत का अधिकार न केवल एक कानूनी अधिकार है, बल्कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 से प्राप्त एक अधिकार है। यह एक अपरिहार्य अधिकार है, फिर भी यह चालान या आरोप पत्र दाखिल करने से पहले ही लागू किया जा सकता है, और यदि इसका लाभ पहले से नहीं उठाया गया है, तो चालान दाखिल होने पर यह लागू नहीं रहता है। एक बार चालान दाखिल हो जाने के बाद, जमानत देने के प्रश्न पर चालान दाखिल होने के बाद अभियुक्त को जमानत देने से संबंधित प्रावधानों के तहत मामले की योग्यता के संदर्भ में ही विचार किया जाना चाहिए और निर्णय लिया जाना चाहिए। संजय दत्त बनाम सीबीआई, बॉम्बे (II) के माध्यम से राज्य में संविधान न्यायपीठ ने दं.प्र.सं. के आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1987 की धारा 20(4)(खख) की सहपठित धारा 167 (2) के प्रावधानों पर विचार करते हुए बहुत ही प्रासंगिक रूप से अभिनिर्धारित किया था कि:-

"48. हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 20(4)(खख) के आधार पर अभियुक्त के जमानत पर रिहा होने के अपरिहार्य अधिकार की प्रकृति के बारे में हमारे सामने आम रुख उस निर्णय में बताए गए सिद्धांत के सही पढ़ने पर आधारित है। ऐसी स्थिति में अभियुक्त को मिलने वाला अपरिहार्य अधिकार केवल चालान दाखिल करने से पहले ही लागू किया जा सकता है और यदि पहले से ही इसका लाभ नहीं उठाया गया है, तो यह चालान दाखिल होने पर पुनः लागू नहीं होता है या अपरिहार्य नहीं रहता है। चालान दाखिल होने के बाद, जमानत देने के सवाल पर चालान

दाखिल होने के बाद अभियुक्त को जमानत देने से संबंधित प्रावधानों के तहत मामले की योग्यता के संदर्भ में ही विचार किया जाना चाहिए और निर्णय लिया जाना चाहिए। चालान दाखिल होने के बाद अभियुक्त की अभिरक्षा धारा 167 द्वारा शासित नहीं होती है, बल्कि दंड प्रक्रिया संहिता के विभिन्न प्रावधानों द्वारा शासित होती है। यदि अभियुक्त को वह अधिकार प्राप्त था, लेकिन चालान दाखिल होने तक वह लागू नहीं हुआ, तो उसके बाद उसके लागू होने का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि चालान दाखिल होने के साथ ही वह समाप्त हो जाता है, क्योंकि दं.प्र.सं. की धारा 167 लागू नहीं होती। खंड न्यायपीठ ने यह भी संकेत दिया कि यदि अभियुक्त द्वारा जमानत पर रिहा करने के लिए ऐसा आवेदन किया जाता है तथा धारा 20(4)(खख) के प्रावधान के अनुसार जांच पूरी करने के लिए समय बढ़ाने की प्रार्थना की जाती है, तो दोनों पर एक साथ विचार किया जाना चाहिए। यह स्पष्ट है कि ऐसे मामले में भी जमानत नहीं दी जा सकती, जब तक कि अवधि बढ़ाने की प्रार्थना खारिज न कर दी जाए। संक्षेप में, ऐसी स्थिति में जमानत देना समय विस्तार के लिए प्रार्थना को अस्वीकार करने के अधीन भी है, यदि ऐसी प्रार्थना की जाती है। यदि अभियुक्त 180 दिन की अवधि या विस्तारित अवधि, जैसा भी मामला हो, की समाप्ति पर इस प्रावधान के तहत जमानत के लिए आवेदन करता है, तो उसे तुरंत जमानत पर रिहा किया जाना चाहिए। इस प्रकार जमानत पर रिहा किए गए अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुसार

गिरफ्तार किया जा सकता है और अभिरक्षा में रखा जा सकता है। संविधान न्यायपीठ के निर्णयों से यह तय है कि अभियुक्त के रिमांड या अभिरक्षा के वैध आदेश के अभाव के आधार पर बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका को खारिज किया जाना चाहिए, यदि नियम की वापसी की तिथि पर गिरफ्तारी या अभिरक्षा वैध आदेश के आधार पर है। (देखें नरंजन सिंह नथावन बनाम पंजाब राज्य [(1952) 1 एससीसी 118: 1952 एससीआर 395: एआईआर 1952 एससी 106: 1952 आप. एलजे 656]; राम नारायण सिंह बनाम दिल्ली राज्य [1953 एससीआर 652: एआईआर 1953 एससी 277: 1953 आप. एलजे 1113] और ए.के. गोपालन बनाम भारत सरकार [(1966) 2 एससीआर 427: एआईआर 1966 एससी 816: 1966 आप. एलजे 602]।)

16. सुरेश कुमार भीकमचंद जैन बनाम महाराष्ट्र राज्य व अन्य (पूर्वोक्त) में अपीलार्थी-अभियुक्त ने धारा 167(2) के तहत इस आधार पर वैधानिक जमानत मांगी थी कि यद्यपि आरोप पत्र निर्धारित समय के भीतर दाखिल किया गया था, लेकिन अभियुक्त पर वाद चलाने की मंजूरी के अभाव में न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया गया था। न्यायालय ने अभियुक्त के दावे को खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया: -

"17. हमारे विचार में, दं.प्र.सं. की धारा 167 के तहत मंजूरी देने पर कहीं भी विचार नहीं किया गया है। उक्त धारा में विभिन्न प्रकार के मामलों के संबंध में जांच को एक निर्धारित अवधि के भीतर पूरा करने और जांच प्राधिकारियों के ऐसा करने में विफल रहने पर अभियुक्त को

जमानत पर रिहा करने के अधिकार पर विचार करती है। किसी अभियुक्त को रिमांड पर लेने से संबंधित प्रावधानों की योजना, पहले जांच के चरण के दौरान और उसके बाद संज्ञान लिए जाने के बाद, यह दर्शाती है कि विधानसभा का आशय कुछ अपराधों की जांच 60 दिनों के भीतर पूरी करने का था और मृत्युदंड, आजीवन कारावास या कम से कम 10 वर्ष की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराधों की जांच 90 दिनों के भीतर पूरी करने का था। ऐसी स्थिति में, जांच अधिकारियों द्वारा जांच पूरी नहीं की जाती है, यदि अभियुक्त जमानत देने की पेशकश करता है, तो उसे जमानत दिए जाने का अपरिहार्य अधिकार प्राप्त हो जाता है। तदनुसार, यदि 61वें दिन या 91वें दिन कोई अभियुक्त आरोप-पत्र दाखिल न होने की स्थिति में जमानत पर रिहा होने के लिए आवेदन करता है, तो न्यायालय के पास अभियुक्त को जमानत पर रिहा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। उक्त प्रावधान पर विभिन्न मामलों में विचार किया गया है और उसकी व्याख्या की गई है, जैसे कि पहले संदर्भित मामले। नटबर परिदा [(1975) 2 एससीसी 220: 1975 एससीसी (आप.) 484] और संजय दत्त [(1994) 5 एससीसी 410: 1994 एससीसी (आप.) 1433] मामलों में लिए गए दोनों ही निर्णय ऐसे थे, जहां दं.प्र.सं. की धारा 167(2) में निर्धारित अवधि के भीतर आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया था और आरोप-पत्र दाखिल करने से पहले जमानत देने के लिए आवेदन किया गया था, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि

आरोप-पत्र दाखिल करने से पहले ऐसा आवेदन किया गया था, तो अभियुक्त को जमानत देने का एक अपरिहार्य अधिकार प्राप्त था, लेकिन एक बार आरोप-पत्र दाखिल हो जाने के बाद, ऐसा अधिकार समाप्त हो गया और अभियुक्त गुणागुण के आधार पर नियमित जमानत के लिए प्रार्थना करने का हकदार होगा।

18. उक्त मामलों में से कोई भी इस स्थिति से अलग नहीं है कि एक बार निर्धारित समय के भीतर आरोप-पत्र दाखिल कर दिया जाता है, तो वैधानिक जमानत या कानूनी जमानत देने का सवाल ही नहीं उठता। जैसा कि ऊपर बताया गया है, हमारे विचार में, इस मामले में आरोप-पत्र दाखिल करना धारा 167(2)(क)(ii) के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है। जहां तक दं.प्र.सं. की धारा 167 का प्रश्न है, संज्ञान लिया गया है या नहीं, यह महत्वपूर्ण नहीं है। यदि आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया होता तो याचिकाकर्ता को जो अधिकार प्राप्त हो सकते थे, वे इस मामले के तथ्यों से प्रभावित नहीं होते। केवल इसलिए कि अभियुक्त पर वाद चलाने और दं.प्र.सं. की धारा 309 के चरण में आगे बढ़ने के लिए मंजूरी नहीं मिली थी, यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्त को दं.प्र.सं. की धारा 167 में परिकल्पित कानूनी जमानत देने का अधिकार है। दं.प्र.सं. की योजना ऐसी है कि एक बार जांच का चरण पूरा हो जाने के बाद, न्यायालय अगले चरण में आगे बढ़ती है, जो संज्ञान लेना और विचारण चलाना है। अभियुक्त को किसी न किसी न्यायालय की अभिरक्षा में रहना पड़ता है। जांच की अवधि के दौरान,

अभियुक्त उस मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में होता है, जिसके समक्ष उसे सबसे पहले पेश किया जाता है। उस चरण के दौरान, दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत, मजिस्ट्रेट को अभियुक्त को पुलिस अभिरक्षा और/या न्यायिक अभिरक्षा में 15 दिनों के लिए, 10 साल से कम की सजा वाले अपराधों के मामलों में अधिकतम 60 दिनों की अवधि तक और 10 साल से अधिक या यहां तक कि मौत की सजा वाले अपराधों के मामलों में 90 दिनों की अवधि तक अभिरक्षा में रखने का अधिकार है। यदि जांच अधिकारी निर्धारित अवधि के भीतर आरोप-पत्र दाखिल करने में विफल रहता है, तो अभियुक्त को कानूनी जमानत पर रिहा किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में, अभियुक्त तब तक मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में रहता है जब तक कि अपराध की सुनवाई करने वाली न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया जाता, तब उक्त न्यायालय दं.प्र.सं. की धारा 309 के अनुसार विचारण के दौरान रिमांड के प्रयोजनों हेतु अभियुक्त की अभिरक्षा का अधीक्षण करता है। दोनों चरण अलग-अलग हैं, लेकिन एक के बाद एक चरण आते हैं ताकि न्यायालय के साथ अभियुक्त की अभिरक्षा की निरंतरता बनी रहे।”

17. फिर से, गंभीर धोखाधड़ी जांच कार्यालय बनाम राहुल मोदी व अन्य में, इस न्यायालय ने सुरेश कुमार भीकमचंद जैन (पूर्वोक्त) का अनुसरण करते हुए कहा: -

"11. भीकमचंद जैन (पूर्वोक्त) में इस न्यायालय के निर्णय से यह स्पष्ट है कि आरोप-पत्र दाखिल करना दं.प्र.सं. की

धारा 167 के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है और कोई अभियुक्त धारा 167(2) के तहत वैधानिक जमानत पर रिहाई की मांग इस आधार पर नहीं कर सकता कि 60 दिनों की समाप्ति से पहले संज्ञान नहीं लिया गया है। अभियुक्त तब तक मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में रहता है जब तक कि अपराध की सुनवाई कर रही न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया जाता है, जो संज्ञान लिए जाने के बाद रिमांड के उद्देश्य से अभियुक्त की अभिरक्षा का अधीक्षण करता है। उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि अभियुक्त को धारा 167 के तहत 60 दिनों की अवधि से अधिक रिमांड पर नहीं रखा जा सकता है और आगे की रिमांड केवल संज्ञान के बाद के चरण में ही हो सकती है, भीकमचंद जैन (पूर्वोक्त) में इस न्यायालय के निर्णय को देखते हुए सही नहीं है।

18. वर्तमान मामले में, जैसा कि अभिलेख से पता चलता है, प्रत्यर्थागण (ए1 और ए2) को दिनांक 19.07.2022 को अपेक्षित प्राथमिकी के संबंध में गिरफ्तार किया गया था, और सीबीआई द्वारा प्रत्यर्थागण सहित अन्य 73 अभियुक्तगण के खिलाफ धारा 173(2) के तहत दिनांक 15.10.2022 को लगभग 900 पृष्ठों की रिपोर्ट (आरोप पत्र) दायर की गई थी। उक्त रिपोर्ट में पैरा सं. 66 में कहा गया था कि: -

"66. शेष प्राथमिकी नामित अभियुक्त व्यक्तियों अर्थात् श्री सुधाकर शेत्री, मेसर्स अमरीलिस रियलटर्स और मेसर्स गुलमर्ग रियलटर्स, शेष सीए (जिन्होंने ई-डीएचएफएल और शेल कंपनियों की तुलना पत्र की लेखा परीक्षा की गयी थी और जिन्होंने प्रमोटरों की सुविधा प्रदान की थी), शेल

कंपनियों और अन्य वधावन समूह कंपनियों के माध्यम से डायवर्ट किए गए फंड के अंतिम लाभार्थी/अंतिम उपयोग, डीएचएफएल अधिकारी, डीएचएफएल शेयरों की इनसाइडर शेयर ट्रेडिंग, बैंक अधिकारी, एनएचबी अधिकारी और अन्य संबंधित मुद्दों की भूमिका का पता लगाने के संबंध में, दं.प्र.सं. की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच जारी है। आवश्यकता पड़ने पर अतिरिक्त साक्षियों और अतिरिक्त दस्तावेजों की सूची दाखिल की जाएगी। इसलिए, विनम्रतापूर्वक प्रार्थना की जाती है कि उपरोक्त अभियुक्त व्यक्तियों को बुलाया जाए और कानून के प्रावधानों के अनुसार उन पर वाद चलाया जाए।

19. इसके बाद विशेष न्यायालय ने दिनांक 26.11.2022 के आदेश के अनुसार कथित अपराधों का संज्ञान लिया था। ऐसा प्रतीत होता है कि इससे पहले विशेष न्यायालय ने धारा 167(2) दं.प्र.सं. के तहत कानूनी जमानत मांगने वाले प्रत्यर्थीगण (अभियुक्तगण) के आवेदन को खारिज कर दिया था, हालांकि उस समय मुद्दा यह था कि प्रत्यर्थीगण के खिलाफ अपराधों के लिए, जांच एजेंसी द्वारा आरोप पत्र दाखिल न करने के कारण अनिवार्य जमानत देने के लिए साठ दिन या नब्बे दिन की अवधि लागू थी या नहीं, और विशेष न्यायालय ने माना था कि प्रत्यर्थीगण के मामले में नब्बे दिन की अवधि लागू थी, जिसमें सीबीआई द्वारा आरोप पत्र दाखिल किया जा सकता था। इसके बाद प्रत्यर्थीगण ने विशेष न्यायालय द्वारा अपराधों का संज्ञान लिए जाने के बाद धारा 167(2) के तहत एक और आवेदन दायर किया, इस आधार पर कि उनके खिलाफ दायर आरोपपत्र एक अधूरा आरोपपत्र था।

20. इस अपील में प्रत्यर्चीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं द्वारा उठाया गया तर्क यह है कि अपीलार्थी - सीबीआई ने आरोप पत्र के पैरा 66 में बताए अनुसार अन्य प्रत्यर्चीगण के संबंध में जांच को जारी रखा है, इसलिए दं.प्र.सं. की धारा 173 के तत्वों का अनुपालन नहीं किया गया है और इसलिए धारा 173 के तहत रिपोर्ट/आरोप पत्र को पूर्ण आरोप पत्र नहीं कहा जा सकता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि न्यायालय ने संज्ञान लिया है या नहीं। उनके अनुसार प्रत्यर्चीगण और अन्य के खिलाफ दायर आरोपपत्र प्रत्यर्चीगण को दं.प्र.सं. की धारा 167(2) के तहत दिए गए अपरिहार्य अधिकार को हराने के लिए एक छल या चाल थी।
21. हमारी राय में, के. वीरास्वामी बनाम भारत संघ व अन्य में संविधान न्यायपीठ ने धारा 173(2) के दायरे को उपयुक्त रूप से समझाया है।

"76. आरोप-पत्र दं.प्र.सं. की धारा 173(2) के तहत पुलिस अधिकारी की अंतिम रिपोर्ट के अलावा और कुछ नहीं है। धारा 173(2) में प्रावधान है कि जांच पूरी होने पर संज्ञेय अपराध की जांच करने वाला पुलिस अधिकारी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा। रिपोर्ट राज्य सरकार द्वारा निर्धारित प्रारूप में होनी चाहिए तथा उसमें (क) पक्षकारगण के नाम; (ख) सूचना की प्रकृति; (ग) उन व्यक्तियों के नाम जो मामले की परिस्थितियों से परिचित प्रतीत होते हैं; (घ) क्या कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है तथा यदि किया गया है, तो किसके द्वारा; (ङ) क्या अभियुक्त को गिरफ्तार किया गया है; (च) क्या उसे मुचलके पर रिहा किया गया है, यदि किया गया है, तो जमानतदारों के साथ या उनके बिना; तथा (छ) क्या उसे धारा 170 के अंतर्गत अभिरक्षा में भेजा गया है। जैसा कि इस न्यायालय ने सत्य नारायण मुसदी

बनाम बिहार राज्य [(1980) 3 एससीसी 152, 157: 1980 एससीसी (आप.) 660] में कहा है कि धारा 173(2) के तहत रिपोर्ट की कानूनी आवश्यकता का अनुपालन किया जाएगा यदि रिपोर्ट में निर्धारित विभिन्न विवरण शामिल किए जाएं। यह रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को यह सूचना है कि संज्ञेय अपराध की जांच करने पर जांच अधिकारी न्यायालय के लिए अपराध की जांच करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्राप्त करने में सक्षम हो गया है और आवश्यक जानकारी न्यायालय को भेजी जा रही है। वास्तव में, धारा 173(2) के तहत रिपोर्ट जांच अधिकारी की राय है कि जहां तक उसका संबंध है, वह न्यायालय द्वारा अभियुक्त के विचारण हेतु पर्याप्त सामग्री प्राप्त करने में सक्षम है। यदि रिपोर्ट धारा 175(5) के अनुसार सभी दस्तावेजों और साक्षियों के बयानों के साथ है, तो रिपोर्ट पूरी है। जांच अधिकारी की रिपोर्ट में और कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं है। यह भी आवश्यक नहीं है कि अपराध के सभी विवरण बताए जाएं। बाद के चरण में अर्थात् मामले के विचारण के दौरान स्वीकार्य साक्ष्य जोड़कर अभियुक्त को दोषी ठहराने हेतु अपराध के विवरण को साबित करना आवश्यक है।"

22. उपर्युक्त स्थापित विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि धारा 173 (2) के तहत रिपोर्ट की कानूनी आवश्यकता का अनुपालन किया जाएगा, यदि उसमें निर्धारित विभिन्न विवरण रिपोर्ट में शामिल किए जाएं। धारा 173 के तहत रिपोर्ट न्यायालय को यह सूचना है कि संज्ञेय अपराध की जांच करने पर, जांच अधिकारी न्यायालय के लिए अपराध की जांच करने के लिए पर्याप्त

साक्ष्य प्राप्त करने में सक्षम हो गया है और आवश्यक जानकारी न्यायालय को भेजी जा रही है। यदि रिपोर्ट के साथ धारा 175 (5) के अनुसार सभी दस्तावेज और साक्षियों के बयान संलग्न हैं, तो रिपोर्ट पूर्ण है। जैसा कि पूर्वोक्त मामले में स्थापित है, यह आवश्यक नहीं है कि अपराध के सभी विवरण बताए जाएं।

23. धारा 167 की उपधारा (2) के साथ संलग्न प्रावधान का लाभ अपराधी को तभी मिलेगा जब आरोप पत्र दाखिल न किया गया हो और उसके खिलाफ जांच लंबित रखी गई हो। हालाँकि, एक बार आरोप पत्र दाखिल हो जाने पर उक्त अधिकार समाप्त हो जाता है। यह ध्यान देने योग्य है कि धारा 173 की उपधारा (8) के अनुसार आगे की जांच के लिए प्रार्थना करने का जांच अधिकारी का अधिकार केवल इसलिए नहीं छीना जाता है क्योंकि अभियुक्त के विरुद्ध उपधारा (2) के अंतर्गत आरोपपत्र दाखिल कर दिया गया है। हालाँकि सामान्यतः अभियोजन पक्षकार द्वारा भरोसा किए गए सभी दस्तावेजों को आरोप पत्र के साथ प्रस्तुत किया जाना चाहिए, फिर भी कुछ कारणों से, यदि सभी दस्तावेज आरोप पत्र के साथ दाखिल नहीं किए जाते हैं, तो वह कारण अपने आप में आरोप पत्र को अमान्य या दोषपूर्ण नहीं करेगा। यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि न्यायालय अपराध का संज्ञान लेता है, अपराधी का नहीं। एक बार आरोप पत्र के साथ प्रस्तुत सामग्री से न्यायालय अपराध के घटित होने के बारे में संतुष्ट हो जाता है और अभियुक्त द्वारा कथित रूप से किए गए अपराध का संज्ञान ले लेता है, तो यह बात मायने नहीं रखती कि धारा 173(8) के अनुसार आगे की जांच लंबित है या नहीं। अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध आगे की जांच लंबित रहने या आरोप पत्र दाखिल करने के समय उपलब्ध न होने वाले कुछ दस्तावेजों को प्रस्तुत करने से न तो आरोप पत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, न ही यह अभियुक्त को इस आधार

पर वैधानिक जमानत पाने का अधिकार देता है कि आरोप पत्र अधूरा था या आरोप पत्र दं.प्र.सं. की धारा 173(2) के अनुसार दाखिल नहीं किया गया था।

24. **दिनेश डालमिया** (पूर्वोक्त) में, इस न्यायालय ने दं.प्र.सं. की धारा 173(8) की तुलना में धारा 167(2) को विस्तार से समझाया है। इस अपील के उद्देश्य के लिए प्रासंगिक पैरा नीचे पुनः प्रस्तुत किए गए हैं: -

"19. आरोप-पत्र संहिता की धारा 173 की उपधारा (2) के अर्थ में अंतिम रिपोर्ट है। इसे इसलिए दाखिल किया जाता है ताकि संबंधित न्यायालय यह विचार कर सके कि अपराध का संज्ञान लिया जाना चाहिए या नहीं। रिपोर्ट सामान्यतः इसके लिए निर्धारित प्रारूप में दाखिल की जाती है। पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत करने की एक आवश्यकता यह है कि क्या कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है और यदि किया गया है तो किसके द्वारा किया गया है। आरोप-पत्र संहिता की धारा 173 की उपधारा (2) के अर्थ में अंतिम रिपोर्ट है। इसे इसलिए दाखिल किया जाता है ताकि संबंधित न्यायालय यह विचार कर सके कि अपराध का संज्ञान लिया जाना चाहिए या नहीं। रिपोर्ट सामान्यतः इसके लिए निर्धारित प्रारूप में दाखिल की जाती है। पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत करने की एक आवश्यकता यह है कि क्या कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है और यदि किया गया है तो किसके द्वारा किया गया है।

20. निर्विवाद रूप से, धारा 173 की उपधारा (8) के अनुसार आगे की जांच करने के लिए प्रार्थना करने की जांच अधिकारी की शक्ति केवल इसलिए नहीं छीनी जाती है

क्योंकि उपधारा (2) के तहत आरोप-पत्र दाखिल कर दिया गया है। यदि मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान लेने का आदेश लिया गया है, तब भी आगे की जांच अनुमेय है।

21.

22. यह सही है कि सामान्यतः सभी दस्तावेज आरोप-पत्र के साथ होते हैं। लेकिन, इस मामले में कुछ दस्तावेज दाखिल नहीं किए जा सके जो सीबीआई के पास नहीं थे और जो जीईक्यूडी के पास थे। जैसा कि पहले बताया गया है, उक्त दस्तावेज 20-1-2006 को दाखिल किए गए हैं, जबकि अपीलार्थी को 12-2-2006 को गिरफ्तार किया गया था। अपीलार्थी का यह तर्क नहीं है कि आरोप-पत्र के साथ ऐसे दस्तावेज दाखिल न करने से उसके प्रति पक्षपात हुआ है। वास्तव में ऐसी कोई दलील नहीं दी गई थी। भले ही सभी दस्तावेज दाखिल न किए गए हों, लेकिन इसके कारण आरोप-पत्र प्रस्तुत करना कानूनन दोषपूर्ण नहीं हो जाता। आरोप पत्र पर कार्रवाई की गई है क्योंकि इसके आधार पर संज्ञान का आदेश पारित किया गया था। अपीलार्थी ने अपराध का संज्ञान लेने वाले उक्त आदेश पर सवाल नहीं उठाया है। उक्त आरोप पत्र की वैधता भी प्रश्न नहीं है।

23 से 27.....

28. यह अब अच्छी तरह से स्थापित हो चुका है कि न्यायालय अपराध का संज्ञान लेता है, अपराधी का नहीं। (देखें अनिल सरन बनाम बिहार राज्य [(1995) 6 एससीसी 142: 1995 एससीसी (आप.) 1051] और पॉपुलर मुथैया

बनाम राज्य [(2006) 7 एससीसी 296: (2006) 3 एससीसी (आप.) 245]।)

29. संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) या धारा 309 की उपधारा (2) के अनुसार किसी अभियुक्त को रिमांड पर भेजने का निर्देश देने की न्यायालय की शक्ति, विचारण के चरणों पर निर्भर करेगी। जबकि संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) उस मामले में लागू होगी जहां संज्ञान नहीं लिया गया है, संहिता की धारा 309 की उपधारा (2) केवल संज्ञान लिए जाने के बाद ही लागू होगी।

30. यदि श्री रोहतगी की दलील को स्वीकार किया जाए तो मजिस्ट्रेट को न केवल आरोपपत्र को अवैध घोषित करना था, बल्कि उन्हें संज्ञान लेने के अपने आदेश को भी वापस लेना था। आमतौर पर, वह ऐसा नहीं कर सकते थे। (अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिंदल [(2004) 7 एससीसी 338: 2004 एससीसी (आप.) 1927], सुब्रमण्यम सेथुरमन बनाम महाराष्ट्र राज्य [(2004) 13 एससीसी 324: 2005 एससीसी (आप.) 242: (2004) 7 स्केल 733] और एवरेस्ट एडवर्टाइजिंग (पी) लिमिटेड बनाम राज्य, रा.रा.क्षे. दिल्ली सरकार [(2007) 5 एससीसी 54: (2007) 2 एससीसी (आप.) 444: जेटी (2007) 5 एससी 529] देखें।) यह भी स्थापित है कि यदि कोई कार्य प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जा सकता है, तो उसे अप्रत्यक्ष रूप से करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। यदि संज्ञान लेने का आदेश विद्यमान है, तो जांच को जारी मानने या अभियुक्त को पुलिस अभिरक्षा या न्यायिक रिमांड पर भेजने के लिए संहिता की धारा 167

की उपधारा (2) के तहत आवेदन दाखिल करने में सीबीआई के आचरण के बावजूद, यह कहते हुए कि आगे की जांच लंबित है, इसका कोई महत्व नहीं होगा यदि प्रभावी और सार रूप में ऐसे आदेश न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 309 की उपधारा (2) के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए पारित किए जा रहे हों।

31 से 37.....

38. विधि की व्याख्या का यह सुस्थापित सिद्धांत है कि उसे संपूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए। विधि का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि उसके सभी उपबंध प्रभावी हो सकें। संसद द्वारा अभियुक्त को दो चरणों में रिमांड पर लेने का विचार किया जाता है; संज्ञान से पहले और संज्ञान के बाद। एक ही मामले में भी, संहिता की धारा 173 के अनुसार जांच अधिकारी द्वारा दाखिल आरोप-पत्र की प्रकृति के आधार पर, उस व्यक्ति के विरुद्ध संज्ञान लिया जा सकता है जिसके विरुद्ध अपराध का मामला बनता है और जिसके विरुद्ध जांच लंबित होने पर भी ऐसा कोई अपराध नहीं बनता है। जब तक संहिता की धारा 173 की उपधारा (2) के अर्थ में आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया जाता, तब तक जांच लंबित रहती है। जब तक संहिता की धारा 173 की उपधारा (2) के अर्थ में आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया जाता, तब तक जांच लंबित रहती है। हालांकि, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, यह जांच अधिकारी को संहिता की धारा 173 की उपधारा (8) के अनुसार पुलिस रिपोर्ट

दाखिल करने के बावजूद आगे की जांच करने से नहीं रोकता है।

39. कानूनी योजना धारा 173 की उपधारा (2) के तहत अंतिम प्रपत्र दाखिल करने तथा उसकी उपधारा (8) के तहत आगे की जांच की ओर ले जाने वाली जांच के संबंध में निष्कर्ष पर नहीं पहुंचती है। जबकि केवल तभी जब आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया जाता है और जांच लंबित रखी जाती है, तो संहिता की धारा 167 की उप-धारा (2) में संलग्न प्रावधान का लाभ अपराधी को उपलब्ध होगा; तथापि, एक बार आरोप-पत्र दाखिल हो जाने पर उक्त अधिकार समाप्त हो जाता है। ऐसा अधिकार केवल इसलिए पुनः लागू नहीं होता है क्योंकि संहिता की धारा 173 की उप-धारा (8) के अर्थ में आगे की जांच लंबित रहती है।

- 25.** उपर्युक्त विधिक स्थिति को देखते हुए, हमें यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि प्रत्यर्चीगण-अभियुक्तगण के विरुद्ध निर्धारित समय सीमा के भीतर आरोप-पत्र दाखिल किए जाने तथा उनके द्वारा कथित रूप से किए गए अपराधों का विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान लिए जाने के कारण, प्रत्यर्चीगण धारा 167(2) के अंतर्गत वैधानिक जमानत के कानूनी अधिकार का दावा इस आधार पर नहीं कर सकते थे कि अन्य अभियुक्तगण के संबंध में जांच लंबित है। विशेष न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने इस न्यायालय द्वारा घोषित और तय की गई कानूनी स्थिति की अवहेलना करके गंभीर कानूनी त्रुटि की है, इसलिए अपेक्षित आदेश निरस्त किए जाने योग्य हैं और तदनुसार निरस्त किए जाते हैं।
- 26.** यदि प्रत्यर्चीगण-अभियुक्त को आक्षेपित आदेशों के अनुसार वैधानिक जमानत पर रिहा किया जाता है, तो उन्हें इस मामले में अभिरक्षा में

लिया जाएगा। हालाँकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस निर्णय में की गई टिप्पणियाँ विशेष न्यायालय या उच्च न्यायालय को अन्य कार्यवाही, यदि कोई हो, पर गुणागुण के आधार पर निर्णय लेने में प्रभावित नहीं करेंगी।

27. तदनुसार अपील स्वीकार की जाती है।

28.

हेडनोट तैयार किया गया: दिव्या पांडे मामले का परिणाम: अपील की अनुमति दी गयी।

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Disclaimer: *The translated judgment in vernacular language is meant for the restricted use of the litigant to understand it in his/her language and may not be used for any other purpose for all practical and official purposes, the English version of the judgment shall be authentic and shall hold the field for the purpose of execution and implementation.*